UGC-जर्नल नं०
UGC नं० 44277
SIL नं०-1065

ISSN 0975-3273
वर्ष 2013
अंक 7

भैरवी

संगीत शोध पत्रिका

मिथिलांचल संगीत परिषद
[illegible]
[illegible]
[illegible]

मुगल काल में हुए परिवर्तनों का प्रभाव यह हुआ कि प्रचलित संगीत शिक्षा वर्ग विशेष के संदर्भ में उनकी अभिरूचियों और आवश्यकताओं को पूरा करने पर केन्द्रित हो जाने के कारण वर्ग विशेष तक सीमित होकर ही रह गई। मुगल शासन के समाप्त होते ही परिस्थितियां फिर बदलीं और संगीत को मिले संरक्षण और प्रतिष्ठा में कमी आना शुरू हो गई। इस संक्रमणकाल में शासक वर्ग संगीत और कलाकारों के प्रति धीरे-धीरे उदासीन होने लगे, आर्थिक कठिनाईयों से उत्पन्न परिस्थितियों के कारण संगीत कला कुछ ऐसे व्यवसायियों के हाथों में आई गई जिन्होंने कला के स्थान पर आर्थिक लाभ को अधिक महत्व दिया। संगीत विशुद्ध मनोरंजन का माध्यम बन कर रह गया जिसका उद्देश्य पूर्णतः व्यावसायिक रूप से वर्ग विशेष की रूचियों के अनुरूप प्रस्तुतियों तक सीमित होकर ही रह गया।

बदले संदर्भों के आम सुधी जनों के संगीत से बिलग हो जाने और संगीत के प्रति उनके बदले हुए दृष्टिकोण के फलस्वरूप संगीत का भविष्य अनिश्चित और अंधकारमय नजर आने लगा। उसी समय पंडित विष्णु नारायण भातखंडे और पंडित विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जैसी महान विभूतियां अवतरित हुई जिन्होंने कठिन परिश्रम और सतत् प्रयासों से संगीत का उद्धार किया। संगीत को व्यक्तिवादी, दरबारी, संकुचित स्वरूप वाले दायरे से बाहर निकाल आमलोगों में पुनः स्थापित कराने में सफल हुए। इस भागीरथी प्रयास में दोनों महापुरूषों ने देश के कोने कोने का भ्रमण कर बड़े बड़े कलाकारों और विद्वानों से संपर्क कर चर्चा प्रारंभ की और संवादहीनता की स्थिति को समाप्त किया। संगीत संबंधी महत्वपूर्ण तथ्यों को संकलित कर ग्रंथों की रचना कर संगीत के विभिन्न पक्षों को जन जन तक पहुंचाने में सफल भी हुए। विभिन्न कलाकारों की बंदिशों को सुना, संकलित किया और उनकी स्वरलिपियां तैयार कर आम लोगों में संगीत सीखने को सुलभ बनाया। अपने संगीत उत्थान के प्रयासों में विभिन्न कलाकारों विद्वानों का भी सहयोग लिया और किये जा रहे प्रयासों में उनकी सक्रिय भागीदारी को भी सुनिश्चित किया। देश के विभिन्न शहरों में संगीत कार्यक्रमों और संगीत सम्मेलनों को आयोजित कर आमलोगों में संगीत के प्रति रूचि और महत्व को पुनः स्थापित किया।

समाज में संगीत के प्रति रूचि रखनेवालों और संगीत सीखने में रूचि वालों के सहयोग से स्थापित की गई संगीत शिक्षण संस्थाओं में सुविधाओं की व्यवस्था कराने में सफल रहे। इस महान कार्य में देश के स्थापित मान्य बड़े बड़े कलाकारों और विद्वानों ने भी उन्हें सक्रिय सहयोग दिया। धीरे-धीरे इन प्रयासों को एक बड़ी सफलता तब मिली जब स्कूलों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में भी संगीत को एक विषय के रूप में शामिल किया जाने लगा। इस प्रकार संगीत शिक्षा का एक नया व्यापक रूप सामने आया जिसमें संगीत की खोयी प्रतिष्ठा को पुनः स्थापित करने में जन भागीदारी को सुनिश्चित किया।

वास्तविकता यह है कि आज के अधिकांश संगीत सीखने वाले विद्यार्थी संगीत शिक्षण संस्थाओं से ही जुड़े हैं। हम सभी का यह दायित्व हो जाता है कि ऐसी स्थिति में गंभीर, गहन, सकारात्मक विचार मंथन करते हुए संगीत शिक्षा में आ रही व्यावहारिक कठिनाईयों पर विचार करें उनके अध्ययन, विश्लेषण हेतु स्तरीय पठन-पाठन की सामग्री उपलब्ध कराएं साथ ही शिक्षण संस्थानों में ही प्रायोगिक संगीत की समुचित व्यवस्था को समुन्नत करें।

उपर्युक्त भावना को समाहित कर भैरवी संगीत शोध-पत्रिका संगीत के विविध रंग लेकर अपने सातवें अंक के साथ आपके समक्ष प्रस्तुत है। आपके सुझाव एवं सहयोग की सदा ही अपेक्षा रहती है। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि संगीत जगत से जुड़े सभी सुधि पाठकों के लिए यह अंक प्रेरणादायक होगी।

–डॉ. पुष्पम नारायण

अनुक्रम

संपादक की कलम से ... 9

1. वैदिक काल में संगीत का स्वरूप — *डॉ. प्रेम किशोर मिश्र* 15
2. वैदिक वाङ्मय में व्यक्त सांगीतिक चेतना — *डॉ. सुधीर कुमार झा* 16
3. तबला वादन में पारम्परिक बन्दिशें (कायदे के विशिष्ट सन्दर्भ में) — *डॉ. नीलू शर्मा* 18
4. राग का भावों से सम्बन्ध — *डॉ. अनिता रानी* 23
5. पंजाब के लोकगीतों में सांस्कृतिक चेतना — *डॉ. सोनदीप मोंगा* 26
6. दक्षिण पूर्वी देशों में रामायण — *सुश्री पी. मेदिनी होम्बल* 31
7. एक या दो स्वरों में राग का अनन्त — *डॉ संजय कुमार सिंह* 37
8. पंजाबी लोक संगीत की वर्तमान प्रासंगिकता — *कुलविन्दर सिंह* 39
9. तन्त्र वाद्य : उत्पत्ति की अवधारणा एवं महत्व — *डॉ. (श्रीमती) कृष्णा चक्रवर्ती* 43
10. भारतीय संस्कृति में संगीत के शास्त्रीय व लोकपक्ष का कलात्मक विवेचन — *हरिओम हरि* 47
11. गमक — *डॉ. संगीता सिंह* 49
12. संगीत शिक्षण की समस्याएँ एवं समाधान — *शर्मिष्ठा* 54
13. पाटलिपुत्र की सांस्कृतिक गरिमा में ललित कलाओं का योगदान — *डॉ. सुचित्रा कुमारी मंजुल* 56
14. दक्षिणात्य सप्त स्वर व उनके सोलह नामों की उपयोगिता एवं महत्ता — *श्वेता केशरी* 59
15. वेदों में वाद्यों की उपयोगिता — *ज्योत्सना सागर* 61
16. ध्रुपद में लय, ताल का महत्व व सैद्धान्तिक विचार — *प्रतिभा सिंह* 63
17. हिन्दुस्तानी संगीत की वैज्ञानिकता और परम्परा — *प्रिया पाण्डेय* 66
18. परम्परागत लोकनाट्य — *प्रीती सोनी* 69
19. नाद, बिन्दु और कला के अर्थ में संगीत के दार्शनिक पहलू — *रागिनी सिंह* 72
20. भारतीय संगीत का अन्य देशों से सम्बन्ध — *निधि श्रीवास्तव* 74
21. भारतीय चलचित्र में संगीत की शुरूआत — *सुनील कुमार गुप्ता* 77
22. संगीत एवं व्यवसाय का समन्वय तथा उसके सम्भावित कार्य क्षेत्र — *नेहा श्रीवास्तव* 81
23. कथक नृत्य के साथ तबले की संगति

Scanned by CamScanner

एक या दो स्वरों में राग का अनन्त

डॉ संजय कुमार सिंह

भारतीय वांग्मय में प्रत्येक विषय का इतना गहन, विस्तृत और सांगोपांग वर्णन मिलता है कि हम पूर्वाचार्यो के प्रति नतमस्तक हो जाते है। हम स्वर को ही लें तो 'स्वर' के रंग, देवता और रस बतायें गये है। दैनिक व्यवहार में हम पाते है कि, संसार में शब्द से अधिक हम स्वर के ही आश्रित है। केवल मनुष्य ही नहीं पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि सभी जीवों का व्यवहार स्वर से ही संचालित है।

अभिनय के साथ व्यवहार में भाषा के अतिरिक्त यदि कुछ है तो वह स्वर ही है। जैसें एक शब्द 'हूँ' को स्वर भेद से अनेक भावों में देखा सुना जा सकता है। आश्चर्य, प्रश्न, स्वीकार, अस्वीकार, निराशा, व्यंग्य, तिरस्कार, घृणा, आदि ये सब स्वर की अनन्ता है।

स्वरों का आपसी संवाद, स्वरों की स्थिति जैसे- मन्द्र-मध्य-तार, स्वरों के उच्चार की गति जैसे द्रुत-मध्य-विलम्बित, स्वरों को अन्य स्वरों का श्रुत्यन्तर, स्वरों का उच्चारण यानी काकु भेद, इन सब बातों के कारण एक ही स्वर समूह में अनेक राग तथा भाव-वैविध्य संभव है। जिसकी गहराई सागर से भी अधिक तथा व्यापकता आकाश से भी ऊँची है। ऐसे स्वर के सामर्थ्य के बारे में सभी विज्ञ है अतः जितना भी कहा जाय सब थोड़ा ही होगा।

संगीत जैसी दिव्य, अमूर्त, अद्भुत कला का प्राणतत्व व्यवहार का नियामक तथा जगत् का अधिष्ठाता 'स्वर' जब विभिन्न संदर्भों में विभिन्न अन्तरालों के साथ, व्यवस्थित नियमों के अंतर्गत तथा प्रस्तुति- विषयक गुरू-आज्ञा के साथ 'राग' में मुखरित होगा तब राग रंग और ताल तथा 'भाव-रस' की कैसी-कैसी अनोखी छटा बिखेरने को सक्षम होगा, यही तो स्वर में राग का अनन्त है।

जैसा कि हम जानते हैं, सप्त स्वरों में ही दक्षिण के 72 मेल उनके अनेक राग भी है और अनेक राग बनते भी जा रहे है। इसी प्रकार उत्तर भारतीय संगीत में भी अनेक राग हैं और जैसे-जैसे आदमी की कल्पना बढ़ती जा रही है। उसी प्रकार और भी राग बनते जा रहें है।

अगर हम सात स्वरों को न लें तब भी छः स्वर को लेकर, पांच स्वर को लेकर अनेक रागों की रचना हमारे भारतीय शास्त्रीय संगीत में है। जिसे हम संम्पूर्ण जाति के राग, षाड़व जाति के राग, औड़व जाति के राग आदि के नाम से जानते हैं। इनमें हर जातियों में अलग-अलग भिन्न-भिन्न राग समूह पाये जाते है। हम यह भी देखते है कि केवल दो या तीन स्वरों के विशेष उच्चार से भी अनेक रागों की झलक मिलती है।

जैसे- हम केवल पंचम और ऋषभ स्वर जोड़ी को लेते हैं।

(1) प रे म ग रे नि़ ध़ नि़ रे सा (यमन)
(2) ध प ग प रे सा (शुद्ध कल्याण)
(3) रे ग म नि ध प रे ग म रे सा (छायानट)
(4) ग म ध प रे सा ग म (नन्द)
(5) ग रे म ग प रे सा (गौड़ सारंग)

इस तरह भिन्न-भिन्न प्रकार से प-रे का उच्चारण या लगाव भिन्न-भिन्न प्रकार की अनुभूति करायेगा।

इसी तरह प और रे का उल्टा स्वरूप रे-प स्वर जोड़ी का प्रयोग विभिन्न रागों में भिन्न प्रकार से होगा।

असिस्टेंट प्रोफेसर, संगीत संकाय, राजा मानसिंह तोमर संगीत एवं कला विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

Scanned by CamScanner

जैसे- मल्हार रागों 'में' रे^{ग} प की संगति, राग कामोद में रे^{ग} प की संगति, राग श्री में केवल ऋषभ को कोमल कर देने से सा रे॒ प रे॒ ग रे॒ सा रे॒ की संगति से अलग-अलग भाव उत्पन्न होगा।

इसी तरह और भी बहुत सी स्वर जोड़ियाँ ऐसी है कि एक ही स्वर समूहों में स्वरों के विशेष लगाव से अनेक रागों का दर्शन होता है। जैसे- राग मारवा के नि॒ रे॒ ग में ही पूरिया, सोहनी आदि। और पूर्वी राग के स्वर में बसन्त, परज, पूरिया धनाश्री आदि रागों की झलक मिलती है।

जैसे- गागर में सागर समाया है। उसी प्रकार सप्त स्वरों में ही संगीत का संसार बसा हुआ है।

चाहे वह विश्व में कहीं का भी संगीत हो सभी सात स्वरों में ही गाये बजाये जाते हैं।

हर एक नगर, प्रांतों, ग्रामीण-अंचलों की लोकधुनों में ही राग छिपे होते है जो कि ढूढ़कर शास्त्रीय संगीत के रूप में प्रस्तुत कर दिये जाते है। श्री कुमार गंधर्व जी का कथन है, कि लोक संगीत का निर्माण स्वाभाविक है, इसको समझकर जब हम विश्लेषण करते हैं और नियमबद्ध कर देते हैं तब यह शास्त्रीय संगीत का रूप ले लेता है।

जैसी-जैसी मनुष्य की कल्पना होती है, वैसे-वैसे और भी राग और धुनें बनती जा रहीं है।

उत्तर प्रदेश के कजरी प्रकार में एक सावनी लोकधुन इस प्रकार है, इसमें भी राग तत्व छिपे हुए है।

"असुअन से लिखतानी पतिया, (सवनवा में आ जइह-2) सजना निदियां ना आवे सारी रतिया

(1) माटी मांगें बदरा से, हिक भर पानी, (कइसे कही का माँगे जिन्दगानी-2) हाय राम गिरल जाले असरा की मितिया हाय-राम

(2) छुटिया मिले ना बिन पगार चलि आवा, अब तजि बम्बई बाजार चलि आवा हाय राम डर लागे लइहा ना सवतिया हाय

जैसे संसार में इतने लोग है सबका नाम हम नहीं जानते, सबका परिचय नहीं जानते, इसका मतलब वो आदमी नहीं हैं ऐसा नहीं है। उसी प्रकार इस संसार में अनेक धुनें हैं, जिनके हम नाम भी नहीं जानते है, अनेक धुनों को राग का नाम भी नहीं दे पायें है न ही सबका नाम देना सम्भव है। किसी भी धुन को पहचानने के लिए नाम दिया जाता है। जैसे बच्चा पैदा होता है तब उसका नामकरण किया जाता है। उसी प्रकार जब कोई धुन बन जाती है तो हम उसका नाम देतें है।

अतः यह सर्वविदित है कि असीमित रूप से संगीत का संसार इन सात स्वरों में ही भरा हुआ है।

यही स्वरों में राग का अनन्त है।

कुछ संगीतज्ञों का तर्क रहता है कि, क्या यह आवश्यक है कि हम प्रत्येक राग को पारम्परिक किसी रस (जिनका प्रयोजन नाट्य के संदर्भ में सर्वथा सुस्पष्ट है) के साथ जोड़े? क्या राग मालकौंस में शान्त रस की जगह बीर रस की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती?

संगीत जैसी अमूर्त और चल कला में उसकी Sulajeetive वैयक्तिक विशेषताओं के कारण जिसके द्वारा होने वाली आनन्दानुभूति को शब्दों में समझाना या शीर्षक दे देना बहुत कठिन है वहाँ तो यही कहना उचित है कि,

जाकी रही भावना जैसी,
प्रभु मूरति तिन्ह देखिय तैसी।।

Scanned by CamScanner